खोलो बंद झरोखे

चंचल चौहान

जनसुलभ प्रकाशन, दिल्ली

1982

भूमिका

प्रहार स्याह रात पर काव्यसंकलन जब 1972 में प्रकाशित हुआ था, तब उसमें मेरी और श्री राजकुमार सैनी की जो कविताएं छपी थीं, वे जनवादी कविता के मौजूदा दौर की प्रारंभिक रचनाएं थीं। आज जनवादी कविता हिंदी साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान बना चुकी है और हज़ारों रचनाकारों की कलम से लिखी जा रही है। जनवादी मूल्यों की अभिव्यक्ति के लिए अंदरूनी तड़प पहले के मुक़ाबले आज कहीं अधिक शिद्दत से महसूस की जा रही है क्योंकि पूंजीवादी-सामंती व्यवस्था हमारे देश में जनवादी मूल्यों को विकसित न करके अब लगातार उन मूल्यों पर आघात कर रही है और अभिव्यक्ति की आज़ादी छीनने तक की कोशिश में है। वह समाज के कमज़ोर वर्गों पर कहर ढा रही है। इस व्यवस्था के ख़िलाफ़ विचारधारात्मक संघर्ष मं जनवादी साहित्य की एक अहम भूमिका है क्योंकि वह उस शोषित उत्पीड़ित जन के साथ है जो एकताबद्ध हो कर कभी स्वयं को मुक्त करके पूरे समाज को मुक्त करने में समर्थ है। आज का इतिहास साक्षी है कि शोषण व्यवस्था से सच्चे अर्थों में मुक्ति सर्वहारावर्ग और उसकी विचारधारा के सही वैज्ञानिक अमल द्वारा ही संभव है।

पिछले दस सालों में मुझ जैसे निम्नमध्यवर्गीय लोग जिस व्यक्तित्वांतर की प्रक्रिया से गुज़रे हैं, उसी की वजह से सर्वहारावर्ग से जुड़ कर जो समय समय पर महसूसा है उसी की कच्ची पक्की अभिव्यक्ति हैं ये रचनाएं जो अंधेरे पड़ाव से प्रस्थान करके 'राह के फूटते स्वर' बन कर मेरे साथ चलती रही हैं। अब ये मेरी नहीं हैं, उन सब की हैं जिन्हें उनका होना है।

माडल टाउन , दिल्ली **--चंचल चौहान**
3 मार्च 1982

क्रम

संपाती की आत्मकहानी	...	5
अंतःप्रवेश	...	7
एक शाम चांद पर	...	10
याद और इच्छा	...	11
सफेद रेह का मैदान	...	13
अशोक स्तंभ के नीचे	...	17
वियतनाम विजय	...	19
गाजर घास	...	20
नीम का रुदन	...	22
नरभक्षी वित्तासुर का प्रलाप	...	25
श्वेताचार्य के नाम	...	27
भिन्नात्मक राक्षस	...	29
स्वप्न समपूरन का	...	30
जेबक़तरों से सावधान	...	31
चांद की ओर	...	33
जगह ख़ाली नहीं रहती	...	34
मिस्टर नटवरलाल	...	35
एक ज़ालिम हवा	...	36
अजीब तमाशा	...	37
ऐरावत की पूंछ पकड़ कर	...	38
हजूर की तारीफ़	...	40
कुछ ऐसा है जो खलता है	...	41
चुंबक का पहाड़	...	42
बादलों में प्यासा बच्चा	...	44
यह काठ का ग्लोब नहीं	...	45
तालाब में तैरतीं जलमुर्ग़ियां	...	46

सिर के कोटर में चिड़िया	...	47
बिखरे बादल	...	48
मुझे तुम पर पूरा भरोसा है	...	49
इस देश में तुम जहां कहीं हो	...	51
मेरा प्यार	...	53
भूत अंधेरा और रोशनी मां	...	54
घन-पुरुष के प्रति	...	56
सरकारी कंबल	...	57

रोशनी के फूटते स्वर

उगते सूरज का गीत	...	59
हे मां	...	60
जन थका हारा	...	61
आओ अब हम जुड़ जायें	...	62
अंधे भिखारी की पीर	...	63
खेत मज़दूर रामदीन	...	64
आत्म-प्रसार	...	65
कामरेड शहीदों की याद में	...	66
ये अक्षयवट ये न मिटेंगे	...	67
एक जंगल की कथा	...	68
मई दिवस का गीत	...	71

संपाती की आत्मकहानी

मै पंखजला संपाती
समंदर किनारे पड़ा हूं
भूखा बहुत समय से !
बिसरे दिन याद आते हैं
वह ज़िंदेगी की दोपहर याद आती है
जय जटायु और मै सूर्य छूने को उड़े थे
जटायु धरती पर लौट आया था
मगर मेरे मन मै भ्रम समाया था
कि मै सूर्य को छू आऊंगा
मै सोने की देह लेकर लौटूंगा ज़मीन पर
इसलिए मै उड़ता रहा !

सूर्य बहुत दूर था मगर उसकी आग
मुझे तिल तिल जलाने लगी
जब पंख भभक कर जल उठे तो अचेत हो गया
मै गिर कर धरती की गोद मै सो गया

एक ऋषि ने मेरी दवा की
कोई रस छिड़का, हवा की
मुझे उस जीवनदाता की याद आ रही है
याद आ रहा है उसका वरदान
धरती का वह ऋषि ही था मेरा भगवान

जानते हो जम्बान ! उस ऋषि ने क्या कहा था?
(मैंने इसी दिन के लिए वह दुख सहा था)
धरती का ऋषि बोला था-
'संपाती ! इस देश के बानर भालू ग़रीब जन
एक दिन निकलेंगे रावण की तलाश में
जिसने धरतीपुत्री को हर लिया होगा
तुम उन्हें कुछ मदद कर सको तो ज़रूर करना
वे रावण के राक्षसपन को ठिकाने लगायेंगे
जिस दिन वे आयेंगे तुम अपने पंख पा जाओगे
उस दिन तुम मुझे अपने बीच पाओगे।'

जाम्बान ! सचमुच मै नया जीवन पा रहा हूं
मुझमें उड़ पाने की सामर्थ आ रही है
धरतीपुत्री की मुक्ति के दिन आ रहे हैं
मै तुम्हारे साथ आ रहा हूं
मै तुम्हारे साथ आ रहा हूं

अंतःप्रवेश

बहुत दिन बाद
अंदर घुसा बियावान घर से
पीली पीली मद्धम रोशनी
गोरी गोरी पत्नी आत्मा
काली जार्जेट की साड़ी में लिपटी
अनमनी उदास
गालों पर गुनगुने आंसू /कातर उसांस

'आत्मन! क्या हुआ तुम्हें ?
आत्मन!
क्या तुम्हें भी सालता है/ आत्मनिवर्सन?
यह सही है
कि बहुत दिन बाद मुलाक़ात हुई है
मगर इस तरह कातर होने की तो
कोई बात नहीं है

तभी कोहरे की स्क्रीन पर
अंदर के सफ़ेद मेमने-शब्द/ हवा में फुदके
'आप अंदर आयेंगे
मुझे था पता
मेरी है अपनी व्यथा
जिसकी कथा तुम नहीं जानते।'
एक ओर हलचल
दूसरी और सदियों पुरानी हवा
सूखे पत्ते उड़ाती

तार संदेशी भाषा में
धूल आंखो में डालती :
'ओ पगले /ओ मूर्ख
विस्मृति ख़तरनाक है
मानव प्रकृति के समय का भोजन
ले, यह कालबोध
ले कुछ शब्द-फूल
वक्त़, वक्त़, वक्त़ पर
क्या है कोई याददाश्त
कम वक्त़
भूत, भविष्यत, वर्तमान
दे ध्यान !
सुन, शाम के गले में लटकी
घंटियों की आवाज़
टाइम...टाइम...टाइम
सुन, समय की सांय-सांय-सांय
गहराती हुई शाम
तुझे सुलाने का इंतज़ाम।'

स्वर्गीय पिनपिनाता एक और स्वर
न जाने कहां से फूटा अंदर :
'जिसे आकाश-कणों ने छुआ है
वही ज़िंदा हुआ है
वह देखो,
जो ज़मीन पर पेट के बल रेंग रहे हैं
मृत हो मृतिका हो गये हैं

फ़ैसला करो,
तुम्हें कहा होना है
क्या तुम्हें होना है/वहां जहां वे हैं
जिनके भीतर आकाश गंगा बहती है,
या वहां जहां ये हैं

जो मिट्टी से लदे हैं
जो-न-कुछ के अलावा कुछ भी नहीं हैं
स्वयं में मुट्ठी भर मिट्टी हैं?'

तभी वर्षा, तभी तूफ़ान
एक खिड़की से मुझे पुकारता
मिट्टी में अंदापुता कोई इंसान
मुझे बुलाता है
पत्नी कहती में अंदर नहीं हूं
(तो क्या बाहर हूं?)
तो फिर बाहर ही सही / मैं अंदर नहीं हूं,
मैंने ब्याही ही नहीं शीलनिधि-कन्या
इसलिए नारद की तरह बंदर नहीं हूं!
मैं हर मिट्टी की मूरत के साथ हूं
बलवान मिट्टी अपने देश की, अपनी दुनिया की
उसी का साथ
उसी के हाथ में हाथ
और इन्हीं के होने में अपना होना है
बाक़ी तो सन्यासियों का रोना है !
ये हैं
ये रहंगे यहां भी वहां भी
ये ही रहेंगे मैं नहीं
मैं तो धुल जाना चाहता हूं
मिल जाना चाहता हूं
मैं धरती बन जाना चाहता हूं
क्योंकि मैं धरती का हूं
मेरे भीतर धरती है
मुझे आकाश गंगा नहीं होना है
मिट्टी में अंदेपुतों के बीच मिट्टी होना है
मेरा तो वही धन, वही सोना है !

एक शाम चांद पर

उस शाम
करके खाने पीने का इंतज़ाम
सैर करने निकल पड़े हम
हम यानी इस कविता का वाचक
और उसका एक मित्र आलोचक
चलते चलते चले गये बहस के आसमान में
ख़याल ही नहीं रहा और हम चांद पर जा बैठे

चांद पर बैटने की कोई तस्स्लीबख़्श जगह तो नहीं थी
फिर भी हम ठंडी शिला पर बैठे
उसे बहस से गर्म करने के लिए
क्योंकि ठंड दूर करने की कोई चीज़ वहां न थी
न लकड़ी न कोयला न बिजली
और हमें आदमी की दुनिया याद आने लगी

चांद पर बैठे हुए भी हमें धरती दिख रही थी
हमारी छोटी सी बिटिया
तख़्ती पर अ आ इ ई लिख रही थी
चांद पर बैठे हुए भी हमें रसोई की खटर पटर
सुनायी दे रही थी
कांच की चूड़ियों की आवाज़
जो कनस्तर से आटा निकाल रही थी
सुनायी दे रहा था बसों का चलना

मज़दूरों का मिल गेट से निकलना
भुजाएं उठाते खाने के डिब्बे का खड़कना
जो भुजाएं ज़माने को फौलाद में ढाल रही थी !

न जाने क्या हुआ की हम चांद से
धरती पर कूद पड़े छोड़कर आसमान
हो गये लहू लुहान।
अब सांवले रंग की एक मां
गोद में रख कर हमारा सिर
लहू पोंछ रही है
और न जाने क्या क्या सोच रही है !

याद और इच्छा

सुबह नहीं हुई है
फिर भी उजाले की एक किरन
दिमाग़ के काग़ज़ पर
घसीट लिखत में लिख गयी है
'याद और इच्छा'
और तभी,
रेल इंजन में दिखायी दिया है
नीली वर्दी में
एक सूरज के चेहरे वाला आदमी
आगे सिगनल के खंभे की और देखता हुआ !

याद है न ?
यह वही आदमी है
जो मिला था/हज़ारों साल पहले
एक दिन बदले हुए रूप में
जंगलों से बाहर

हल को खींचता हुआ
मालिक के कोड़े पर
भींचता हुआ होंठ !
मालिक ने इसे
बेचा, क़त्ल किया
कन्या के बिवाह में दहेजा इसे
काले देश से
गोरे देश भेजा इसे !
और इसने उस जुल्म का अंत किया
मरा एक युग और खुद जिया !

याद है न ?
यह वही आदमी है
जिसकी पीठ पर
रजवाड़े लदे थे
राजा कहता था- सर्प, सर्प, सर्प...
इसने देखा था उस युग का भी दर्प
राजा खुद को खुदा समझता था
(सचमुच ईश्वर अंस जीब अविनासी)
और वही आदमी अब है
लोको का खलासी
झोंक रहा है इंजन में आग
लाल लाल कोयले उसकी मुट्ठी में हैं
उसकी आंखों में हैं
वह झांक रहा है
इंजन की बायीं खिड़की से सिगनल की और
उसके भीतर झांक रही है स्मृति,
सत्ता
और झांक रहा है भविष्यत!

सफेद रेह का मैदान

देखो, वह उधर गांव है
कच्ची मिट्टी की चटकी हुई भीतें
भीतों पर है धरी
बीचोंबीच पुरानी सी बड़ेरी
बड़ेरी पर लदा हुआ जटायु सा छप्पर
इस छप्पर के नीचे अधनंगा भूमिहीन आज़ाद भारत
मका मडुआ की रोटी
सरसों या चना के साग से
या दरहरी की फरी से
या सिर्फ़ नमक और मिर्च से
या सिर्फ़ प्याज़ से
आज भी खाता है हमारा प्यारा आज़ाद भारत
इस छप्पर के नीचे !

अब नहीं गाता है फाग या कजरी
क्योंकि न होली में रंग है
न बरखा कमबख़्त वक़्त पर आती है
कच्ची मिट्टी की चटकी हुई भीत और चटक जाती है !
पोखर सुख जाते हैं
गांव की तलैया में दरार पड़ जाती है
गाय भैंसें सिगरे ढोर
प्यासे बिललाते हैं

नहर तो होती है मगर पानी नहीं होता है
बूढ़ा गंगादीन हर वर्ष कलजुग के लिए रोता है
कब तक चलेगा इस तरह?
कब तक चलेगी प्रभु की माया?
कि कहीं धूप और कहीं छाया?

गांव से लगा हुआ
मीलों तक सफ़ेद रेह का मैदान है
वह ऊसर है
जिसमें हरी घास भी नहीं उगती है
जेठ की घाम धुधुआती हुई
दौड़-दौड़ जलते हुए पंजों पर
वहां न जाने क्या चुगती है?
गांव से लगा हुआ
फूली सफ़ेद मिट्टी का यह मैदान
शहर और गांव की छाती पर कोढ़ है !
भरी जेठ की दुपहरिया में
कंधे पर लाठी धरे
पैदल शहर जो जाते हैं लोग
अधमरे हो जाते हैं
है नहीं आसान
पार करना यह मैदान !
(किसान के पैर को चमरौधा भी मयस्सर नहीं)

बिवाई फटे पैर आज़ाद भारत के,
वह कंधे पर लाठी धरे
सौदा सपट्टा ख़रीदने
या कहीं कुछ गिरवीं रखने
इसी मैदान में होकर शहर जाता है
देखता है आलीशान कोठियां, ठाठदार दुकानें
सोने की लड़ियां सेठों के गले में
स्वागत के लिए बाहें फैलाये
कि आज़ाद भारत उनके पास आये !
आज़ाद भारत फटा अंगोछा सिर से बांधे
शामिल है शहर कि भीड़ में
अपने जैसे करोड़ों लोगों की पेंठ में
जैसे घूमता हो घायल तूफ़ान

कंधे पर लाठी धरे
विचर रहा है शहर में आज़ाद भारत
इस युग का दधीचि महान
ठठरी सा आदमी
भीतर और बाहर का सारा दर्द
सहता हुआ फिर भी कुछ न कहता हुआ
उसी का लड़का कहीं
मशीन मालिक की दाढ़ी के बीच छटपटाता है
जिसका खून चूस कर बिड़ला का नाती
रोज उसके लिए समाजवाद लता है !
और वह है कि देश का नेता नहीं है
देता है सब कुछ/मगर चहेता नहीं है किसी का भी
हालांकि उसी के पास है इस युग की चाभी !

पेंट से घर लौटने के लिए
फिर पार करना है उसी लंबे मैदान को
जो ढंका हुआ फूले सफ़ेद रेह से
समस्या है
यह ऊसर कैसे दूर हो अपनी ही देह से !
सुना है दीनू किसान का लड़का
शहर से सीख आया है
ऊसरी ज़मीन सुधर सकती है
आज़ाद भारत की संतान अपनी पर आ जाये
तो क्या नहीं कर सकती है?
उसे मालूम है सही फ़ार्मूला
ज़मीन का जो हिस्सा है सफ़ेद और फूला,
उसे खरोंचो,
(उससे सोडा बन सकता है)
फिर उसमें जिप्सम डालो
इस तरह का कोई प्रोग्राम बना लो
कि जिससे यह ऊसरी ज़मीन सुधर जाये

फिर एक दिन ऐसा भी आ सकता है
कि उसमें फ़सल लहराये
बशर्ते वह ज़मीन किसानों कि हो जाये
(इसके लिए सोचना ज़रूरी है
यह सिर्फ़ उनकी ही नहीं
हमारी भी मजबूरी है)

ऊसरी ज़मीन की जगह
बन सकती है एक हरी-भरी बगिया
या फिर मीलों तक सुगंध फैलाती गेहूं की बालियां
बीचोंबीच सिंदूरी मांग सी
एक सड़क गाव से शहर तक
जनता चाहे तो उसके किनारे
फलदार पेड़ बो सकती है
वह सफ़ेद रेह का ऊसरी मैदान
जो कटा हुआ बियावान
चूने का टापू है
जिसको जेठ का ज्वालामुखी
जलाता है
जिसमें अभी कोई
शंखाहुली तक का फूल
खिल नहीं पाता है
बदल सकता है
बदल सकता है
हम सबकी देह से लगा हुआ
सफ़ेद रेह का मैदान !

अशोक स्तंभ के नीचे

यह चिकनी-चिकनी लाट अशोक की
इसके ऊपर खड़े हुए/ सिंह चार
वाह मेरे यार !
तुम भी यहा आए?
तीन शेर तो दिखते है साफ़
माफ़ कीजिए, चौथा शेर कहां है जनाब?
अरे! वह सामने से नहीं दिखता
इधर आओ कंकरीटे रास्ते पर
इधर इस ओर, और खोलो तीसरा नेत्र
और देखो वह बर्बर सिंह
जिसकी पूंछ से तीन और बंधे हैं
मगर अशोक की अहिंसात्मक लाट पर/वे चौमुख सधे हैं!
मेरे देश के भ्रमणप्रिय लोगो !
क्या अभी तक भी तुम्हारी पसलियों ने
ईनका खूनी नाखूनी पंजा/ नहीं महसूसा है?
क्या बताओगे
इस देश के करोड़ों बच्चे का अधनंगा मांस
किस बेरहम ने चूसा है?
यह सत्य की ही जय है
कि हमें/ पत्थर के बने
इन अहिंसक शेरों का भय है!
मेरे देश के घुमक्कड़ लोगो !
क्या तुम्हें मालूम है
तुम्हारे मौलिक कान किसने काट खाये हैं?
अनहद नाद गप्पों का/किसका सृजन?
किसका प्रसारण गुंजायमान हवा में क्षण-क्षण?
किसकी गुर्राहट से घबराकर/ भागने को विवश?
विज्ञापन भरे अख़बार में लिपटी रोटी-सी
संदेह भरी क्यों/कहां भूल आये?

आखें कहां गयीं,
गालों में रक्तहीन गड्ढे कैसे उग आये?
वह हकलाती जीभ
किसकी चपेट में आयी है?
हाय! तुम्हारी ही बात
तुम तक नहीं पहुंच पायी है?

मेरे देश के सैराट लोगो !
मुझे अफ़सोस है
मैं सफ़ेद कालर सी इस जीभ से
नहीं समझा पता
उस दिन स्टेशन पर उतरती अपनी ही लाशों का
भावार्थ
शांतिप्रिय जुलूस पर गोली दाग़ने का
गूढ़ार्थ
राइफ़ल की दम पर हड़ताल के वक़्त
रेल-इंजन से काटे गये साथियों की
तड़पती सांवली सलोनी छातियों के
दर्द की व्याख्या/ मैं कर नहीं पता

अरे, इन शेरों के पंजों तले दबे चक्र का भी
एक अर्थ होता है !
लाभ-लोभ सुरक्षा अधिनियम का भी
मेटीनेंस आव इनह्यूमन सोसाइटी एक्ट का भी
एक अर्थ होता है/ मुझे अफ़सोस है
उस अर्थ को अकेला मैं / खोल नहीं पाता
हकलाता हूं, ठीक से बोल नहीं पाता !
किसी दिन करोड़ जन/मिलकर ज़रूर खोलेंगे
इस शेर-छाप सत्य का अर्थ
वे ज़रूर करेंगे
इस चक्र छाप जन-गण-मन अधिनायक की मीमांसा
क्योंकि वे ही देते आये है/ हमें तुम्हें भाषा !

वियतनाम विजय

लो, संघर्ष की ज़मीन में से
लाल लाल सदाबहार फूलों वाला
वह पौधा फूटा ही/ फलने-फूलने के लिए
जिसे पत्थरों के पांवों ने रौंदा तीस साल
जिसे दिलावर मालियों ने/ खून से सींचा है !

वे माली लाल मशाल लिये हुए
उधर देखो ! ऊपर खड़े हैं
पत्थर के पांव धूल बन/क्रांति-शिशु के पैरों तले पड़े हैं

इस मशाल के प्रकाश का इतिहास/ हमें भी राह देगा
कि हमारा भी हौसला बढ़ेगा
इसलिए यह विजय हमारी भी है
यह पौधा भी बढ़ेगा, बनेगा वृक्ष अद्‌भुत
जिसकी छाया तले/आदमी आज़ादी की सांस ले
उजड़े खंडहरों पर भी
मेहनतकशों की कल्पना का स्वर्ग संवार देगा
आओ ! हम भारत के शोषित माली भी
इस चमन में छिपे लकड़बग्घों की/ शरारत ख़त्म करें
खत्म करें यह झगड़ा पुराना
और अपनी धरती पर भी/ ऐसा ही पौधा उगायें
फलने फूलने के लिए !

गाजर घास

झुग्गी झोपड़ियों में/ आदमी की नस्ल पर
तलवार झूल रही है
मगर नयी दिल्ली में
हर जगह मस्ती भरी गाजर घास/ फलफूल रही है !
पूसा का एक वैज्ञानिक कहता है :
गाजर घास में/ एक घातक विष रहता है
आदमी को यह घास
कोढ़ी अपाहिज दीन दुखी
बेबस लाचार बनाती है

मगर खुद
चांदी के सफ़ेद फूलों का मुकुट पहने
सजी-धजी खड़ी बहुत इठलाती है !

इसकी पहचान
अगर आपकी नहीं हैं श्रीमान,
तो आप धरती पर औंधे पड़े हैं
शायद गा रहे है अकेले में/ टूटन के गान!
ज़रा इधर भी दीजिए ध्यान !
यह गाजर घास, न गाजर है न घास है,
मात्र एक विषैली, मिथ्या आस है
जो हमारी धरती पर जबरन अधिकार किये बैठी है।
इसकी पत्तियां कहती :
'मैं गाजर हूं...'
चांदी की सफ़ेद टोपियां कहतीं

'मैं घास हूं, जनता का विश्वास हूं'।
मगर वैज्ञानिक पूसा कहता है :
'यह न गाजर है, न घास है
वह आदमी की सेहत के लिए/ सवा सत्यानाश है।
इसलिए, इसे उखाड़ो/ समूल नष्ट करो
मानवता का कष्ट हरो'

आज बुलडोज़र से
घास नहीं, आदमी उखड़ रहा है
गाजर घास का फैलाव सतह पर/बढ़ रहा है।
इसके बीज सुदूर पश्चिम का
सड़ा हुआ गेहूं लाया था
आज कुतर्की ज़ालिम हवाएं
हर उर्वर जंगली भू पर/ इसे बिखेर रहीं।
जहां कल तक एक झुग्गी थी
गाजर घास आज पसरी मिलेगी वहीं।
जहां कल तक सब्ज़ी बेचती मेरी मां
और बग़ल में धूल में लोटता मैं था
वहां जब गाजर घास मुसक्याती है
जहां छुटभइयों का पेट पलता था
वहां अब गाजर घास आंखें मटकाती है।

कल की कह दूं,
लगता है, जहां आदमी बसता है
वहां गाजर घास के पौधे उगाये जायेंगे
आदमी के शव (स्पार्टाकस)
उसी पर झूलते नज़र आयेंगे,
हाय! बस्ती उजाड़ कर/ जंगल रोपा जायेगा
कितनी बार और आदमी की पीठ में
बदला हुआ छुरा घोंपा जायेगा?
कब लगेगी आग/ गाजर घास वन में
खुशी कब लहरायेगी जन गन मन में?

नीम का रुदन

दउआ कहते थे
जब भी नीम रोता है
तब ज़रूर कुछ होता है

नत्थू के घेर में
खड़ा जो नीम
अबकी बार फिर रोया
हमारे गांव वालों के
भुरभुरे खेत
चेहरों पर
घिनौने क्रूर मौसम ने
झूठे शब्द बीजों को
अपने लट्ठ के बल पर
इधर बोया उधर बोया
भोले आदमी बांधे
ग़रीबी से लदे मारे
थके हारे
कुछों के सिर कुचल डाले
किसी की चीर दी जांघें
काटी इंच भर की नस
ग़रीबी देश की जैसे
वहीं थी कुंडली मारे

सपेरे कनफटे आदिम
बजाते बीन ले नश्तर
उन्हें तो आदमी का
सिर्फ़ नागस्वर अखरता है

बड़े जो सांप ऊपर हैं
न दिखते हों असंभव है
कनफटे और आदिम हैं
सफेदी में छिपी कालौंच
अब बिलकुल झलकती है
जनता इन सपेरों का
नश्तर बीन सहती है

सफ़ेदी पुती क़ब्रों से
निकलकर भूत आते हैं
टोपी पहनकर बंदर
हमें रह-रह घुड़कते है
बगुला भगत ले माइक
कि क्या बक बक लगा रक्खी !

निर्धन आंख के आगे
अंधेरा ही अंधेरा है
दिलों में कुछ मशालें हैं
मगर उस और तो देखो
लुटेरों के अमीनों का
वहां मज़बूत डेरा है
इधर है देश, जनता है
ग़रीबी की कराहें हैं
और अंधी निगाहें है
गांव में नीम रोता है
उधर सूरज शहर भीतर
छुटफुट रोशनी के बल्ब
इसे देता उसे देता
आंखें दान करता है
इधर देहात में गंगू
भूखी गाय भैंस छोड़
छोड़कर ख़ाली लढ़ौरी

जेल में सड़ने गया है
(सत्य कहना जुर्म उसका)

गली में घूमता है एक
झूठा सच्च
बारंबार बारंबार
आफ़तकाल का जैसे
रोज़ का अख़बार
फैले हुए हैं बीज
जिस पर शब्द फफले हैं
उड़ाती बृद्ध मां लेकर
हाथों तर्क का वह सूप
नये युग ने दिया है जो
भूखे आदमी को आज
जिसने आग बख़्शी है
होगा भस्म उससे ही
हिरण्याक्ष, उसका तम।
बजेगी तभी पृथ्वी पर
तर्किल किरन की सरगम।

नरभक्षी वित्तासुर का प्रलाप

हूं ! हूं ! मुझे ख़त्म करने की ख़्वाहिश?
जभी मिलेगा मौक़ा / वे खाये जायेंगे।
उनको पता नहीं/ मैं कितनों के भेजों में
हूं घुसा हुआ/ कितनों के पेटों को वित्ताकार बनाया है।
चीं चीं करने से होता क्या?
मेरे पंजे में
दबी हुई उनकी ताक़त की आजमाइश।
गुर्राकर मैं इस जंगल से सबको दहला दूंगा
वे घबरा जायेंगे।
पता नहीं है उनको/पैने नाखूनों की विकट मार
है बंधी पूंछ से।
मेरे पीछे चलते है आचार्य बृहस्पति
कवि लेखक और भाष्यकार
गजपति से लेकर रतिपति तक।
क्या होता है/ आम आदमी की जनसंख्या है ज़्यादा
अपनी कम है?
पर अपने नाखूनी
खूनी पंजे में तो दम है।
इसलिए में मालिक हूं / अब भी मनु के उपवन का
वह जिंदा है यह क्या कम है?
सच पूछो तो/ में उपकर्ता ही हूं जन का।
यह विकास
यह हरी घास
यह भूख प्यास /सब मेरी ही तो रचना है
फिर मुझसे क्या बचना है?
मैं पूर्वज हूं उस भविष्य का / वर्तमान का
उस हविष्य का / अग्निकुंड में जिसे झोंकने

नंगा ऋषिवर दौड़ रहा है लेकर
मुझे ख़त्म करने का ख़्वाहिश।

कहां कहां से ख़त्म करेगा/ वह बेचारा?
मैं तो घुसा हुआ हूं/ हर सफ़ेद चादर के नीचे
हर चूने से पुती हुई दीवार तले
फिर अपनी दाढ़ें/ अपने पंजे
बहुत बड़े हैं
हिंद महासागर से ले कर
शांत अंध में घुसे पड़े हैं
यों तो हो हल्ला मचा हुआ है :
'वित्तासुर को ख़त्म करो
राज आदमी का आने दो
इस जंगल में'।
लेकिन मैं तो निडर
फिर अपनी दाढ़ें अपने पंजे/ अपने पहरे बहुत कड़े हैं
मेरे चाकर मौन देवता
लगभग यहां तटस्थ खड़े हैं
मैं उनके भीतर हूं
मैंउनके बाहर हूं
मैं हूं /दायें बायें
मैं हूं
हूं! हूं ! हूं!
यह जंगल है
नहीं आदमी रह पायेगा
जब तक मैं हूं
यह जंगल तब तक जंगल है।

श्वेताचार्य के नाम

राक्षसी माया से
बौद्धिक लाड़ लड़ाने वाले
श्वेताचर्य !
क्षमा करना आपके अध्ययन मनन में विघ्न डाल रहा हूं
(जो अभी आधा है)
निवेदन है कि
क्षण से भी आगे जो क्षण है
कुछ क्षण उस पर भी सोचना
शरीर में खून के लाल अंशों के साथ
तुम्हार क्या सलूक हो
उस पर भी सोचना
श्वेताचर्य !
और फिर सोचना उस जलते वर्तमान पर
या उस आगामी भयावह दुःस्वप्न के बारे में भी
कुछ सोचना
कि किस तरह दर्दीली मनुज ठठरी पर बात करना
बन सकता है भयंकर गुनाह
किस तरह तर्कसंगत समाधान पर
दाग़ी जा सकती है गोली
फिर भी आपको दिख सकती है सत्ता भोली।

इस पर भी सोचना कि किस तरह
फ़रेब और हिंसा
सुदूर पश्चिम से मांगी जा सकती है
हर ईसा की ठठरी सलीब पर टांगी जा सकती है
हो सकता है यह दुःस्वप्न न भी घटे
(अगर जन अपने मोर्च पर डटे)
हो सकता है तुम्हारी वजह से

वह दुःस्वप्न इससे भी बदतर हो
कि कुछ इस तरह
कि जब हम ढूंढ़ रहे हों समाधान
ग़रीबी का, अमानवीयता का
भुखमरी, मुफ़लिसी का
ज़िंदगी जीने की लाचारी का
आदमी और इंसान के बीच की खाई का
कि तभी दनादन गोली चले
आग लगे
किताबों पर झुके समस्या-समाधानों पर।
सचाइयाँ ज़िंदा जला दी जायें
खून का सही रंग पहचानती किताबों की रोशनी
जिन चेहरों पर हो
उनके दिल चीर कर गीधों के सामने
फेंक दिये जायें
(क्योंकि हमारा शासक अर्द्धपशु है)
इस संभाव्य मार्शल-लॉ
इस दुःस्वपन के घटने या न घटने की ज़िम्मेदारी
तुम्हारी भी होगी
इस पर भी सोचना और सोच कर ही न रह जाना
श्वेताचर्य !
राक्षसी माया से लाड़ लड़ाने वाले
अपने को तीसमारखां समझने वाले
मैली कमीज़ और पसीने की बू में पिछड़ापन सूंघने वाले
श्वेताचर्य !
इस आग जाल से तुम बचकर निकल जाओ
कमस्कम यह असंभाव्य है
क्योंकि बनैली आग में से
है सुसंस्कृत !
जीवित बच निकलना आसान नहीं है
क्योंकि तुम्हारा जिस्म अभी जंगल है
फ़ौलादी मकान नहीं है !

भिन्नात्मक राक्षस

भिन्नात्मक राक्षसों ने
अपने ही तर्कों के बबूल
जब जब उगाये
उनके खुद के वस्त्र कांटों में उलझे
मगर वे औरों पर बौखलाये
उन्होंने सारा गुस्सा उन पर निकाला
जो किरनों को जुटा कर
प्रकाश के फूल उगाने की कोशिश में हैं

हर रात पौने नौ बजे
कांटों का एक गट्ठर
मेरे बिस्तर पर बिछा मिलता है
बदमगज़ भिन्नात्मक राक्षस
अहं की लंगोटी पहने
उघड़े ठाटबाट में अपने वस्त्र सिलता है
संघर्षी इंसान को वह देता है गाली
अपने कुएं में उसकी टर्र
है सचमुच निराली !
और यह कुआं हम सबकी छाती पर धरा है
इसीलिए यहां आदमी अधमरा है !

स्वप्न समपूरन का

अभी स्वप्न खंडशः
पूरा होने की झलक भर देता है
कल सुबह
समपूरन के लिए अंजुरी बांधेगा
आज का
थका टूटा मन !

नदी के किनारे एक मेले में
जहां सैकड़ों बैलगाड़ियां
और रौंछियाते बैल
स्नान-पर्व के इंतज़ार में खड़े हैं
वहीं सुखद बालू में
एड़ियां गड़ाये
थोड़ी ही दूर पर
गर्मियों की झुकी झुकी भोर लेटी है
लाल ओढ़नी मुंह पर डाले
उन्हीं सपनों की पुटरिया
सिर के नीचे दबाये
जो कल तक उसे जरूर
बनायेंगें समपूरन !

जेबक़तरों से सावधान

ये जेबक़तरों भी खूब हैं
ईश्वर की तरह सर्वव्यापी हैं
बड़े पापी हैं
इनकी बांहें इतनी लंबी
कि देश भर की जेबें नापी हैं

ईश्वर की तरह ये सर्वशक्तिमान
हालांकि हर बस में
हर टिकट-खिड़की पर लिखा हुआ है :
'जेबक़तरों से सावधान'
मगर फिर भी जेबें कट ही जाती हैं
सबकी तनख्वाहें जेबकतरों के घर चली जाती हैं

जेबक़तरे खुश और आदमी दुखी है
जेबक़तरे गा रहे हैं, वंदे मातरम्
उनमें इतना अहम
कि चुनौती दे रहे हैं :
'आओ, किस में है दम ख़म!
नहीं जानते?
हम भारत-भाग्य-विधाता हैं
सत्ता हमारी
हम उसके जामाता हैं
हमारे इशारे पर
उठते गिरते है झंडे और डंडे
हमने पाले है पहलवान मुस्टंडे
हमारे साथ है सुरसा माई
जेब कटने की रपट मत लिखवाना

नहीं तो वह खा जायेगी, भाई।'
जेबकतरों के ही यहां ठाटबाट हैं
इसीलिए हम सब बारहबाट हैं
यों तो हम सब ज़्यादा
और जेबक़तरे हैं कम
मगर हमारे तो अपने अपने हैं ग़म
जिनमें हम डूबे हुए हैं
अकेले अकेले ऊबे हुए हैं
मेहनत की कमाई की जेबें कट रही हैं
निठल्लों के घर रेवड़ियां बंट रही हैं

अब तो लगता है देश जेबक़तरों का,
उनकी मां का, उनके बाप का है
(वैसे इसे आपके खून पसीने ने रचा है
इसलिए यह आपका है)
लेकिन यह भी सही है
कि अभी यह आपका नहीं है।

चांद की ओर

एक अदद राजकुमार
दोनों कंधों पर दो सफ़ेद घोड़े
बेचारे पर सवार
राजकुमार बेतहाशा उड़ा
चांद की ओर
खूब हुआ शोर
गांव के पोखर में नहाते
ग्वालों ने देखा
हर जगह चर्चा छिड़ी
चिड़ी के गुलाम ने बताशे बांटे
सेठ धन्नामल ने कहा
राजकुमार को चाहिए सब की नस काटे

एक अदद राजकुमार
दोनों कंधों पर दो सफ़ेद घोड़े
बेचारे पर सवार
क्या करे
दो मिनट बाद ही मिला
बुरा समाचार !

जगह ख़ाली नहीं रहती

एक दार्शनिक
बड़ा शातिर था
कहता था : आदमी के होते
जगह ख़ाली नहीं रहती
मुझे भी लगता है
जनता बेवजह दुख सहती
पेट ख़ाली तो अंगूठा क्यों नहीं चूसती
बिना वजह सरकार को मूसती

आदमी की आदत है
उसे ख़ालीपन अखरता है
गद्दी ख़ाली होती है
दूसरा राजकुमार उसे भरता है
और वह न भरे तो क्या करे?

भूखा नंगा इंसान
किसी तरह अपना
पेट भरता है
उसे कहां फ़ुरसत जो गद्दी भरे
और फिर वह उसके लिए
ख़ाली भी तो नहीं,
जो उसके लिए मरे !

मिस्टर नटवरलाल

मिस्टर नटवरलाल
जो कभी आदमी हुआ करते थे / अब एक पेड़ हैं
यह व्यक्तित्वांतर भी अजीब है!
किसी के लिए वे बबूल का कांटा हैं
और किसी के डंडे की भेड़ हैं

मिस्टर नटवरलाल / स्वतःसंपूर्ण हैं
क्योंकि वे गलतियां नहीं करते
सबको पचाना जानते हैं
वे लवणभास्कर चूर्ण हैं

मिस्टर नटवरलाल
जो कभी आदमी हुआ करते थे/ जब एक मुर्ग़ा हैं
हवा का रुख़ देखकर मोड़ते है चोंच!
एक मौक़ा हाथ लगा / एक दोस्त के मार दी खरोंच !

मिस्टर नटवरलाल
जिनकी करवट ऊंट बैटता है
अजीब है यह व्यक्तित्वांतर !
जी कभी आदमी हुआ करते थे /जब वे एक हाथी हैं
(असग़र वजाहत की 'डंडा' कहानी के)
वैसे वे आदमी है पानी के !

एक ज़ालिम हवा

इस ज़ालिम हवा को
पहचाना गंगू भाई / जिसने हमें तुम्हें
रेगिस्तान बना डाला?
यह हवा नहीं/हमारी तुम्हारी भूल है
कांटों भरी बबूल है
यह फलप्रद पौधों को / उगने नहीं देती
यह नन्हें पंछियों को
चुग्गा चुगने नहीं देती !

इस ज़ालिम हवा को
पहचाना, गंगू भाई
जिसने हमें तुम्हें
धूल भरा मैदान बना डाला?
जहां बरखा नहीं होती
कोयल कहीं दूर रोती
आम उखट गये हैं
हमारी ज़िंदेगी के क्षण घट गये हैं

गंगू भाई ! तुम बादल क्यों नहीं बन जाते
एक बार अपने आसमान पर/ क्यों नहीं तन जाते
इस धरती को हरियाली से पाटने के लिए
इस ज़ालिम हवा के पर काटने के लिए?

अजीब तमाशा

उसने एक रस्सा आसमान की और फेंका
रस्सा तिरंगे झंडे की तरह तन गया / हवा में
दर्शकों ने खुश हो कर बजायीं तालियां
और तभी एक आदमी रस्से को पकड़कर
लगा आसमान की और बढ़ने
याद नहीं आ रहा उसका नाम
पादरियों जैसा सफ़ेद चोगा पहने
शायद वाईचव्वाण
नहीं, नहीं, वह नहीं
मलमल का सफ़ेद कुर्ता पहने/ कोई और निष्प्राण
रस्से पर चढ़ता चला गया
और बहुत ऊपर जा कर ग़ायब हो गया !
दर्शक स्तब्ध !
थोड़ी देर बाद उस आदमी का एक पैर / ज़मीन पर आ गिरा
फिर दूसरा पैर /ख़ैर
धड़ भी आ गिरा और सिर भी !
समझा नहीं कोई फिर भी !
मदारी के साथ की औरत उठी
और बोरे में भर कर उस बिखरे आदमी को / पीठ पर लाद
कर ले गयी !
अब न जाने उसका क्या होगा ?
मदारी भी रस्सा उतार कर उसके पीछे चला गया !

ऐरावत की पूंछ पकड़ कर

इंद्र का सफ़ेद हाथी ऐरावत
एक दिन उनके आंगन में उतर आया
सारे के सारे कपड़े के व्यापारी
हर्षित हुए भारी
'इंद्र के शहर में चलो कपड़ा बेचेंगे
कमायेंगे मुनाफ़ा।'
सब ने बांधा सिर से साफ़ा
कपड़ों की तह लगी गठरी
पीठ से बांधी
लोहे का मीटर दबाया बग़ल में
घेर कर ऐरावत को यों बोले :
'हुजूर ! इंद्र के शहर कब लौटेंगे?
यहां तो कपड़ा बिकता नहीं
लोग तन ढंकने की कोशिश भी नहीं करते
मंदी मार रही है हमको
आप आ ही गये हैं आंगन में
हमें इंद्रलोक ले चलें हुजूर
कुछ बिक्री हो जायेगी !
लागत तो लौट आयेगी।'

ऐरावत ठठाकर हंसा
और बोला 'जैसी तुम्हारी मंशा
मगर हमारी पीठ पर नहीं बैठ सकते
क्योंकि वह तो इंद्र की है
पूंछ पकड़ कर चलो!'

एक कड़ियल व्यापारी ने
ऐरावत की पूंछ पकड़ी
औरों ने पकड़े ऊपर वाले के पांव
और व्यापारी उड़े ऐरावत के संग
अजीब था रंग
उड़ रहा था काफ़िला
तभी एक व्यापारी को
एक चिंता सतायी
उसने पूछा : 'वहां का मीटर
कितना बड़ा है भाई?'
पूंछ छोड़ कड़ियल व्यापारी
हाथ से नाप बताने को हुआ
कि सारा काफ़िला हवा में तैरा
और आ कर गिरा सीधा ज़मीन पर
बताते हैं कि खोजने पर भी
उनकी लाशें नहीं मिली हैं!'

हुजूर की तारीफ़

हुजूर !
आप आदमी हैं या खजूर ?
वैसे आप कुछ भी हो सकते हैं,
क्योंकि आप हैं
और आपका होना मायने रखता है!

हुजूर !
यों परसों आप भी थे मजूर
और आज अचानक पेड़ हो गये
बड़े शेर बनते थे जनाब
अब पालतू भेड़ हो गये !

हुजूर !
आपने सिर्फ़ अपना होना तलाशा है
हमें क्या पता था
इसीलिए रस्से पर चलने का यह तमाशा है!

हुजूर !
एक बात कह दें?
आपका होना हमारी वजह से ही है
इसका ज्ञान शायद आपको नहीं है!
इसीलिए, शायद हुजूर
बने हुए है खजूर!

कुछ ऐसा है जो खलता है

बदलती रोशनी के ज़माने में भी
कुछ ऐसा है जो खलता है
आदमी के भीतर बहुत कुछ ऐसा है
जो उसे छलता है!
इसीलिए बहस जारी रखो!
बहस के लिए मुद्दे बड़े है

मोहनसिंह प्लेस में
मसलन, उस टेबल के आसपास
भाई लोग सिर के बल खड़े हैं
और उनमें से सब अलग अलग
एक दूसरे के पीछे / बंदूक की नली लिये पड़े हैं

यही वे लोग हैं जिन्हें
सारी दुनिया एक नाव जैसी लगती है
जिस पर वे सवार हैं
जिधर चाहेंगे नाव बह जायेगी
सिर के बल खड़े रहने से
मानवता हर भली-बुरी चीज़ सह जायेगी

बीमार बच्चों के शीर्षासन से / ज़माना नहीं बदलता
ज़माना चंद कोयलों के आग पकड़ने के नायकवाद से
नहीं धधक उठता
उसके लिए सही दिमाग़ और सही दिल
और फिर करोड़ मशालें चाहिए
सिर के बल खड़े लोग इन मशालों को ही बुझा रहे हैं
विश्व के खूंख़ार दुश्मन के तलवे सहला रहे हैं!

चुंबक का पहाड़

ये जो काले कलूटे चिपके गाल
स्टीलनुमा सांवले हाड़ हैं
वे जो बीड़ी पी रहे है
खांस रहे हैं ये मामूली नहीं हैं आदमी
वे चुंबक का पहाड़ हैं
लोहा खिंच रहा है इनकी और
उत्तर और दक्षिण ध्रुव की पहचान
करा रहे है

इनके लिए लड़ाकू विमान तोप गोला बारूद
एटम और न्यूट्रोन बम
जुटा रहे हैं सूदख़ोर हत्यारे
क्योंकि इनके डर के मारे
उनका पेशाब निकला जा रहा है
क़दमताल करता हुआ ज़माना
इंसान का

ये जो हमारे भाई हैं चाचा हैं
कई एक पिता के बराबर हैं
माताएं भी सड़क पर बच्चे लिटा कर
तारकोल मिली गिट्टी यकसां कर रही हैं
सड़क के रोलर के पहिये पर पानी चुपड़ रही हैं
ऊंची बिल्डिंग की पड़ रही छत पर
सीमेंट मिश्रित कंकरीट के तसले ढो रही हैं
ये ग़रीबने जो बिना इलाज मरे बच्चे की मौत पर रो रही हैं
चुंबक का पहाड़ हैं

और पूरा ज़माना लोहा है
इधर ही खिंच कर आयेगा

जिस जिस के भीतर फौलाद बनने लायक़
लोहे के कण हैं खिंचे आ रहे हैं
उनही की ख़ातिर सूरज उगा रहे हैं
ईमान का वे
ढांचा बदल रहे हैं इंसान का वे।

बादलों में प्यासा बच्चा

सफ़ेद बादलों के बीच एक बच्चा
रो रहा है प्यास से
आकाश कह रहा है
पीने के पानी का इंतज़ाम हो रहा है
इस साल !

बादलों में प्यासे बच्चे को देखकर
मैं रुंआसा हो जाता हूं
अपनी छोटी बांहों पर दुखी होता हूं
बहुत कोशिश करने पर भी
एक गिलास पानी बादल तक नहीं पहुंचा पाता हूं
और मैं छटपटाता हूं रोते हुए बच्चे को देखकर

बादल के पास क्या पानी नहीं है?
बादल बच्चे को पानी क्यों नहीं देता?
धरती से, सागर से जो भी पानी लेता है
बादल उस पानी को कहां ले जाता है?

हाय! मैं क्या करूं?
मुझसे बादल भी दूर बच्चा भी दूर !
मैं मजबूर रोता हूं
कहीं एक दिन बच्चा भी बादल न बन जाये
धरती का बेटा प्यासा न रह जाये
धरती के बेटे को सब की प्यास का इंतज़ाम करना है
मरना भी है तो एक साथ मरना है !

यह काठ का ग्लोब नहीं

अपार डालर राशि की चम्मच मुंह में ले कर
पैदा होने वाले नर-भक्षियो !
यह काठ का ग्लोब नहीं/ जिसे तुम जला कर खुश हो लोगे !
हम जानते है नर-भक्षियो / तुम क्या चाहते हो
आदमी को हमेशा गुलाम बनाये रखने के दिन लद गये
इस ग्लोब पर सिर्फ़ रंगीन नक्शा नहीं छपा है
यहां अपार धन संपदा है
जिसे तुम हड़प कर जाना चाहते हो
जैसे वह सिर्फ़ तुम्हारे बाप की है
हम सब इस धरती के हैं यह धरती हमारी भी
यह धरती उनकी जिन्होंने / इसका रूप संवारा है
जिन्हें इंसान प्यारा है न्यूट्रोन बम नहीं !
हे आत्मघातियो ! तुम्हें इस ग्लोब के अधनंगे भूखे
मटमैले बच्चे
सड़कों पर, खानों में / खेतों में खलिहानों में
काम करती माताओं के पास कहीं मिट्टी में खेलते
आधी रोटी खाकर दिन काटते / मुस्कुराते अखरते हैं !
ये जिन्होंने धरती पर तुम्हारे तईं / स्वर्ग उतारा है
तुम्हें खलते हैं
हर बार तुमने इन्हें मारा है पगलाये कुत्तो!
भस्मासुरो ! तुम स्वयं भस्म होना चाहते हो
यह काठ का ग्लोब नहीं
यहां वे रहते हैं / जिन्होंने भगवान रचा है
जिनके क्रोध से कोई पापी नहीं बचा है
धरती पर !

तालाब में तैरती जलमुर्ग़ियां

अपने गांव के तालाब में तैरतीं
जलमुर्ग़ियां मुझे बहुत अच्छी लगतीं
कितनी आज़ाद, कितनी तनावहीन
जैसे कोई गीत रचने में लीन
जलमुर्ग़ियां किसी से कुछ नहीं चाहतीं
तालाब में सतह पर तैरती रहतीं बिना कुछ खाये पिये
लेकिन आदमी ऐसे कैसे जिये?

एक पेड़ के नीचे बैठा मैं
आज़ाद तनावहीन जलमुर्ग़ियों को देखता हूं
मेरी आंखे एक तालाव बन जाती हैं
सुदूर भविष्य का एक समाज उस पानी में तैर उठता है
कितना आज़ाद कितना तनावहीन
एक अद्‌भुत रचना में लीन
और फिर अपने वर्तमान में रो उठता हूं मैं

एक पेड़ के नीचे बैठा मैं बोधिसत्व
तालाव के उस पार गोली की आवाज़ सुनता हूं
ठाकुर जंडेल सिंह ने शायद चलायी है
क्योंकि उनके नौकर ने मरी हुई जलमुर्ग़ी
लपक कर उठायी है
और फिर अपने वर्तमान में रो उठता हूं मैं !

सिर के कोटर में चिड़िया

नीम की डाल पर न जाने
कहां से एक बाज आ बैठा
और मुझसे बोला---
'मैं तमाम छोटी चिड़ियों को खा जाऊंगा
मैं खून में नहाऊंगा, जश्न मनाऊंगा।'
मेरे बूढ़े पिता ने भी बाज की आवाज़ सुनी
और वे डर गये !
हाय! हम मर गये।

बाज ने समुच हत्याएं शुरू कर दीं
हमारे चमन की गाती चिड़ियां
मार कर धर दीं
नीम की डाल डाल रोयी
मेरी आत्मा खून के आंसुओं में
डुबोयी बाज ने
मुझे मारा कल ने / मारा आज ने !
बाज चिड़ीमार है
उसे खून से प्यार है!

क्या करें कहां छिपायें आत्मा का टुकड़ा?
सिर के कोटर में छिपी प्यारी चिड़िया को
कैसे बचायें
उसके गीत कैसे सुन पायें?
बाज ने इस चिड़िया पर घात लगा रखी है
सुबह सुबह उसके मीठे गीत सुनने को मैं तड़प रहा हूं
उसे आज़ाद हो उड़ते देखने को तरस रहा हूं
हृदय के तालाब में कमल भी तभी खिलेगा
जब चिड़िया गायेगी
बाज मरेगा और भोर आयेगी।

बिखरे बादल

'दिन मंह बद्दर रात निबद्दर
बहे पुरवाई झब्बर झब्बर
कहे घाघ कछु होनी होई
कुआं के पानी धोबी धोई'
लालमन चाचा जानते हैं कि बारिश नहीं होगी
बादल घूम रहे हैं बने हुए जोगी अलग अलग रंगों में
बहुत तो शामिल हैं लफंगों में

बादल हिरनों पर सवार हैं
हिरन बिना लगाम दौड़ रहे हैं
अलग अलग बिना लगाव बेभाव
दिन भर भागते हैं बादल आसमान में
जब थक जाते हैं तो काली सांपिन उन्हें लील जाती है
सारा आसमान सांपों का होता है
ज़माना झोंपड़ी में पड़ा सोता है

ये बादल भी खूब हैं
ये आसमान पर छायी हरी दूब हैं
जिस पर ओस की बूंदे नहीं हैं
किसी की जड़ें कहीं और किसी की जड़ें कहीं हैं
अलग अलग भाग दौड़ में व्यस्त बादल
टकरायेंगे गरजेंगे मगर बरसेंगे नहीं।

जब तक वे मिलकर एक नहीं हो जायेंगे
रात जैसी सांपिन पर बिजलियां गिराना

आसान नहीं

लालमन चाचा जानते हैं अभी बारिश नहीं होगी
अभी बादल
अपनी अपनी ढपली और अपना अपना राग गा रहे हैं
हिरनों की पीठ पर चढ़े
हरियाणा की और जा रहे हैं !

मुझे तुम पर पूरा भरोसा है मातादीन

मातादीन !
मुझे तुम पर पूरा भरोसा है
यह ज़रूर है कि अभी तुम्हें
ज़माने के पहरेदार चाकरों ने
जी भर कर कोसा है
मैं तुम्हारे भीतर छिपी
अगाध गंगा को प्रणाम करता हूं
मैं उसमें डूबकर जीता हूं
उससे दूर रहकर मरता हूं
मातादीन !

मातादिन !
मुझे तुम पर पूरा भरोसा है
भले ही आज तुमने शराब पी ली है
तुमने अपनी ही औरत की पिटाई की है
तुम्हें अपनी ही छोटी सी बच्ची पर

तरस नहीं आया है
लेकिन मैं जानता हूं तुम्हारे ऊपर
किस भूत का साया है
मैं तुम्हारे भूत से नहीं
तुम्हें प्यार करना चाहता हूं
क्योंकि मुझे तुम पर पूरा भरोसा है
मातादिन !

तुम्हारे दिल के तहख़ाने में
कहीं कोई दुष्ट अंधेरा है
जिसने तुम्हें आ घेरा है
लेकिन कांटों के बीच घिरी
गुलाब की काली सी एक भोर किरन भी
वहीं जन्म ले चुकी है
पूरब में ताल के किनारे पड़े घूरे में से
उर्वरा भोर भी तो जन्म ले रही है
मातादिन !

इसीलिए मुझे तुम पर पूरा भरोसा है
कि तुम मेरी पाक मोहब्बत को बदनाम नहीं होने दोगे
और सूरज को हर टूटे फूटे घर तक पहुंचाने में
हमारी मदद ज़रूर करोगे
मातादिन !

इस देश में तुम जहां कहीं हो

मैं यह आवाज़ दे रहा हूं तुम्हें
इस देश में तुम जहां कहीं हो
मशीन के जबड़ों के ऐन सामने
बत्तीस मंज़िला बिल्डिंग बनाते
हाथ में कन्नी वसूली लिये
या गारा पहुंचाते
या खानों के घुप्प अंधेरे में
धरती के गर्भ में बतियाते
कि इस देश की धड़कन तुम्हीं हो
तुम्ही हो इसका दिल
और दिल पर ही चोटें पड़ रही हैं
हाय! फिर देश का क्या होगा?

मैं यह आवाज़ दे रहा हूं
इस देश में तुम जहां कहीं हो
खेत को रामे के भैंस से जोतते हुए
या ढेंकुली से खरबूज़े सींचते हुए
चैत में फ़सल काटते हुए
या जेठुआ मक्का बोते हुए
कि देश की धड़कन तुम्हीं हो
तुम्हीं हो इसका दिल
और दिल पर ही चोटें पड़ रही हैं
हाय! फिर देश का क्या होगा ?

मैं आवाज़ दे रहा हूं
इस देश में तुम जहां कहीं हो
प्रेस में कंपोज़ीटरी करते हुए
गेली प्रूफ़ पढ़ते हुए या पेजमेकअप करते हुए

या रेल इंजन में कोयला झोंकते हुए
या स्टील को पानी बनाते हुए
या कफ़न बुनते हुए इस ज़माने का
तुम्हीं हो इसका दिल
और इस दिल पर ही चोटें पड़ रही हैं
हाय! फिर देश का क्या होगा ?

मैं यह आवाज़ दे रहा हूं तुम्हें
इस देश में तुम जहां कहीं भी हो
एक हो
यह आसमान, यह धरती तुम्हारी है
जिसके तुम दिल हो
और यह विशाल दिल क्या नहीं कर सकता है
अपने व पराये की पहचान कर
दुनिया बदल सकता है
धरती का यह दिल
जो ज़िंदगी को धड़कन देता है !
हवा को
बंधी हुई मुट्ठी से जीवन देता है
धरती का यह दिल !

मेरा प्यार

मेरा प्यार वहां पल रहा है / जहां कीचड़ के बीच
धरती पर जवानी पल रही / कमल की कली सी
सूरज के उगने के साथ साथ
मेरा हाथ/ उन्हीं से हाथ मिलाने को बढ़ता है
जो लोहे के पाइपों को / वैल्ड करके मिला रहे हैं
किसी पुल को बनाने में व्यस्त हैं
मैले कुचैले कपड़ों में मस्त हैं

यों तो सावन हर साल आता है
हरियाली भी आती है
मगर इनके लिए क्या लाती है / रात के पौने नौ बजे?
यही सुनते कि अब यह होगा /अब वह होगा
कि अब सारे गांवों में पीने को / पानी होगा सन बयासी तक
इस सदी के अंत तक सबको भोजन /ज़रूर मिलेगा
मेरा प्यार वहां पल रहा है / जहां इसका इंतज़ार हो रहा है
आदमी पटरी पर सो रहा है
वह कम प्यारा नहीं
भले ही वह आज हमारा नहीं
कल ज़रूर इधर आयेगा
क्योंकि तब तक वह पुल बन जायेगा
जिसे कई हाथ बनाने में व्यस्त हैं
मैले कुचैले कपड़ों में मस्त हैं !

भूत अंधेरा और रोशनी मां

अंधेरा अक्सर सुलाता है
गोलियां नींद की दे कर
रोशनी हमको जगाती है
छेड़ कर कुछ नये से सुर
अंधेरा भूत आ आ कर
सताता है
भयावह नींद लाता है
उसके पैर उल्टे
चल रहे ऊपर ज़मीं से
दे रहा बख़्शीश
चेले चाकरों को
लूट कर सब कुछ हमीं से
रोशनी मां है
हमको जगाती है
हम उसकी गोद में होते
वह भीतर समाती है
अंधेरा जंगली भैंसा
अड़ाता सींग छाती में
रोशनी हमको जगाती
छूकर सिर तभी धीमे

जब जब शाम होती है
कुछ उल्लू चले आते
वे हैं चीखते कहते
ढाटा बांध कर मुंह पर
'इसको दोपहर मानो

अंधेरा देवता है
इस पर छत्र सब तानो।'
वे लालटेनें तोड़ते, ढिबरी बुझाते हैं
चाटने को स्नेह
रक्त देहों का
बदल कर भेष आते हैं
क्या करें
इस तरह
अंधेरा हर बार छलता है
पूछो तो यही कहते :
'यहां तो सब चलता है
अपना तर्क अपनी शक्ल
अपनी धौंस अपनी अक्ल
सभी चलती।'

रोशनी मां है, वह धरती
सभी दुख झेलती है
मुसकुराती है
धीरे से जगाती है
अंधेरा तोड़ता है
हर चौरस्ते पर हमें
यों मोड़ता है कि
दिशा भ्रम होता है
अंधेरा में हर आदमी खोता है
स्वयं को / जग को
अंधेरे में आदमी आदिम होता है
रोशनी देती है ज्ञान
सच तो यह है/ रोशनी बनाती है
बंदर को इंसान
रोशनी मां है
सबको जगाती है !

घन पुरुष के प्रति

धौंकनी की फूंक से
जब लोहा लाल होता है,
उस समय तगड़ी भुजाओं से
हुई घन मार से
पिटता हुआ दिक्काल होता है
कि कमाल होता है
हम जानते हैं श्रम के बिंदु का भी मूल्य !

लोहा बादल कर
वस्तु बनता है
ओ घन पुरुष !
तुम्हारा पराक्रम ही
इतिहास खनता है
तब टूटता है
जो कुछ झूठा वाग्जाल होता है
कि कमाल होता है
हम जानते है सत्य के सिंधु का भी मूल्य।

सरकारी कंबल सरकार को ही मुबारक

सरकार !
हम आपके बहुत बहुत शुक्रगुज़ार
हम देउली के चमार हजूर
इस अहसान के बोझ से दब जायेंगे
कि सरकार ने कंबल भेजे है गोली से मरे परिवारों को
देउली के चमारों को सरकार ने हमदर्दी दी है
कंबलों की राहत बख़्शी है हजूर ने
हम आपके बहुत बहुत शुक्रगुज़ार
हजूर आप भी डाकुओं के शुक्रगुज़ार हों
जिन्होंने हजूर को यह मौक़ा दिया कंबल और संबल भेजने का
इस मौक़े को किसी आड़े वक्त़ के लिए सहेजने का !

हजूर इन कंबलों का अब हम क्या करें ?
हमारे मरने से पहले / दो चार हफ्ते भी कंबल आते हजूर
तो गोली से मरने से पहले हम
कुछ दिन ओढ़कर सुख से तो जी लेते
हम भी जानते कि कंबल में नींद कैसी आती है
अब हम इन कंबलों का क्या करें हजूर
कंबल जनम भर खाये नहीं जा सकते
हजूर कहें तो हम सब मिल कर इनसे ताप लें
हजूर भी दिल्ली कि राह नाप लें / हेलीकाप्टर से !
हजूर इन पुराने कंबलों से हल नहीं होती मुश्किल
आपको ही मुबारक हों ये कंबल !

रोशनी के फूटते स्वर

कुछ गीतनुमा कविताएं

आखिर मैं आदमी हो गया
लपटों बीच गाता हुआ
उन दोस्तों को भाता हुआ
जो रात में बिखेरते नया रंग
ढाबों पर गीत गाते संग संग

– पाब्लो नेरुदा

उगते सूरज का गीत [1]

खोलो बंद झरोखे खोलो / खोलो बंद दुआरे, हो !
मुझको अंदर आ जाने दो / खोये सब कुछ हारे, हो !
मैं लाया हूं फूल सुनहरे/ मैं लाया हूं नयी हवा
मैं लाया हूं नयी रोशनी / ओसभरी यह पुननर्वा।
उठ बैठो बेसुध सोये हो / जैसे घोड़े बेच चुके
थकी हुई पलकें तो खोलो / तुम कब से यहां रुके !
मन की छोटी झोंपड़िया में / मुझको भी आ जाने दो
अपनी इस टूटी खटिया पर / मुझे फूल बरसाने दो
फैलाने दो खुशबू घर में /आंगन में आ जाने दो
बैठूंगा दिल की मुंडेर पर / पंख ज़रा फैलाने दो
मैं हर छोटे घर आंगन में / नित खुशियां फैलाऊंगा
हर छोटे बच्चे के चेहरे / पर मैं ही मुस्काऊंगा
मेरी गर्मी हर छप्पर पर / जीवन वेलि चढ़ायेगी
फूल सुनहरे यों फैलेंगे / रात न आंख मिलायेगी
खोलो बंद झरोखे खोलो / खोलो बंद दुआरे, हो !
मुझको अंदर आ जाने दो / सदियों के दुखियारे , हो !

---

1. चीनी कवि अई चिंग की एक कविता से प्रेरित

हे मां

हे मां !
तुझे पैबंदों से वे कैसे ढांप पायेंगे ?
तुझ गरीबन की गुदड़ी में
थिगली जोड़ कर
वे चलाना चाहते हैं तुझे
टांगे तोड़कर !
बया की जोंज सी ख़ाली
खोपड़ी वाले क्या बदल जायेंगे?

कौन हैं वे
जो तुझे जंगल बनाना चाहते हैं ?
आदमी के ठूंठ पर
उल्लू बिठाना चाहते हैं ?
क्या तुम्हारे पौध को
वन शूकर नोंच खायेंगे ?

हे मां !
तू भी खूब है जो सहन करती है।
झूठ के आकाश का भी,
तू निर्वहन करती है।
काट डाली जुबां
अब ये हाथ काटे जायेंगे?

क्या नहीं है पास तेरे
एक लौ को छोड़कर
बना सकती नया चोला
इसे तोड़ मरोड़ कर
आरती उतारने तब
देवता भी आयेंगे !
हे मां !

जन थका हारा

महल के हरमीपन ने
इंसान को बहुत मारा
इसलिए अब नयी गीता
रचेगा जन थका हारा

मान कैसे लें तुम्हारी
फल न चाहो कर्म करके
खून को पानी बनाता
हाथ पर अंगार धर के
फ़लसफ़ा उसको पुराना
है नहीं स्वीकार मरके

खोपड़ी में भरे भुस ने
बनाया है बेसहारा
इसलिए अब नयी गीता
रचेगा जन थका हारा

अरे वह सूरजमुखी बन
देशभर में अब खिलेगा
चिथड़े अपने बदन के
भला यों कब तक सिलेगा
जानता, संघर्ष से ही
विश्व यह उसको मिलेगा

झील अमृत से भरेगा
समंदर यह बहुत खारा
इसलिए अब नयी गीता
रचेगा जन थका हारा !

आओ अब हम जुड़ जायें

परिचय कर लें हर आंगन से
फिर सूनापन सूनापन क्या ?

क्यों रहते अनमनी गली में
बंद कोठरी में जीते
निजी दर्द की खटपाटी ले
अपना ज़हर स्वयं पीते
इसे सौंप दें जन धारा को
यह अपना धन अपना धन क्या ?

पूरब में बदली चमकी है
गीली धरती धूल नहीं
हम क्यों रेगिस्तान बने हैं
जिसमें हंसते फूल नहीं
दिल में सिर्फ़ बबूल उगाते
यह उत्पादन उत्पादन क्या ?

जिधर करोड़ों पांव मुड़ रहे
चलो उधर ही मुड़ जायें
टूट लिए काफ़ी एकाकी
आओ अब हम जुड़ जायें

इस सफ़ेद मठिया से निकलें
फिर निर्वासन निर्वासन क्या ?

अंधे भिखारी की पीर

पीर मुहम्मद
इकतारे पर
गाता अपनी पीर

अलस सुबह
बर्फ़ीली सर्दी
सर्द कोठियों के नीचे
मांग रहा हमदर्दी रह रह !
(अरे! लोग आंखें मींचे !)
कांप रही कूड़े करकट में
वह अंधी तस्वीर !

औरतिया की बांह गहे
वह सहता है
ज्यों ठूंठ सहे
पटरी पर प्यारा भारत
अब रहता है
क्या कौन कहे ?
आज अंधेरी चीख
उसी की
गयी सुबह को चीर !

खेत मज़दूर रामदीन

तहमद फटा
मिरजई मैली
उसके तन पर मारकीन की
दिन दिन घटी
ठिठुरती काया
भोले निर्धन रामदीन की !

उसकी बेगारों ने भर दीं
ज़मींदार की छिपी खत्तियां
पर अकाल में उसने खायीं
सूखी घासें और पत्तियां !

खून चूसकर
उसकी देही
ज़ोर जुलम ने बहुत क्षीण की

इतनी ठंडी हवा चल रही
उसका खून
तुषार बन गया
जीवित है पर मरा हुआ
गिद्धों का आहार बन गया !

वादों के
कच्चे धागों से
रफू न होती
दशा दीन की !

आत्म-प्रसार

गुज़र जाने दो / रात की काली हवा
सुबह / फिर गुनगुनाऊंगा !
तुम्हारे साथ गाऊंगा !

अभी तो / शब्द पर पहरे
उजाले की / स्वस्थ काया
में हैं घाव कुछ गहरे
सुधर जाने दो / उदासी भरी बगिया
फूल बन खिलखिलाऊंगा
तुम्हारे साथ गाऊंगा !

अभी तो / अंध घेरे हैं
विषैली लू / व दमघोंटू
विचारों के बसेरे हैं
फहर जाने दो / लालिमा की पताका
किरन बन / उतर आऊंगा
तुम्हारे साथ गाऊंगा !

अभी तो सत्य बंदी है
बनैले असत् की थूबड़ / खूंरेज़ और गंदी है
बिखर जाने दो रेत के ढूहे
लहर बन फैल जाऊंगा
तुम्हारे साथ गाऊंगा !

कामरेड शहीदों की याद में

जिसकी किरन मिटायेगी / इस अंधकार की स्याही को
लाल सलाम आज अपने / उस वीर शहीद सिपाही को

मर कर सदा अमर रहता है / मौत स्वयं मरती है
जन शहीद की लाल आत्मा / नहीं मिटा करती है

रोक सका है क्या उल्लू दल / नयी भोर के राही को ?
लाल सलाम आज अपने / उस वीर शहीद सिपाही को

नवयुग के लाने वाले से / जो टकराया, हारा है
एक नहीं दो नहीं करोड़ों / की यह अमृत धारा है

दुनिया में जो मिटा रहा है /धन की तानाशाही को
लाल सलाम आज अपने / उस वीर शहीद सिपाही को

रोक सकी हैं नहीं कुबेरों / की वे ज़ालिम हथकड़ियां
नहीं हौसला तोड़ सकेंगी / ये बारूदी फुलझड़ियां

जिस सूरज का रथ रौदेंगा / जारों की मनचाही को
लाल सलाम आज अपने / उस अमर शहीद सिपाही को !

ये अक्षयवट ये न मिटेंगे

ओ गुलाम पूंजी के तुमने / जिनको लाशें समझा है
वे लाख मसीहा है अपनी / क़ब्रों से उठ आयेंगे !

जो सूरज उग रहा, रुका क्या / यदि कौवे लें घेर उसे ?
रोक भला कैसे सकता है / बारूदी अंधेर उसे ?

दबे हुए हैं चट्टानों से / ये अंकुर फ़ौलादी हैं
भेद कठोर शिलाओं को भी / ये उग कर दिखलायेंगे !

इस दमकल से आग बुझेगी / पगलाये मन का भ्रम है!
जिस दिन जलीं करोड़ मशालें / तब देखेंगे क्या दम है!

वहशीपन की इस सलीब पर / तुमने जिन्हें चढ़ाया है
वही तीसरे दिन ज़िंदा हो / शोले बन मुस्कायेंगे

काश कि शाहंशाहों ने भी / यह दुख दर्द जिया होता
खून नहीं, इन तकलीफ़ों का / कड़वा ज़हर पिया होता !

अरे गांठ के पूरे पापी / तुम आंखों से ठगे गये
ये अक्षयवट ये न मिटेंगे / ये तो तुम्हें मिटायेंगे !

एक जंगल की कथा

एक समय था इंद्रप्रस्थ के
आसपास था भारी जंगल
जिसके भीतर मना रहे थे
हिंसक चीते, भालू मंगल !
भेड़ बकरियां हिरनी हिरना
लेकिन उसमें परेशान थे
सत्ताधारी शेर राष्ट्र के गौरव
सचमुच अति महान थे!

एक शेरनी बूढ़ी जंगल
के उन पशुओं की थी रानी
उसके धारदार नाखूनों
की थी यह मशहूर कहानी
जंगल में शेरनी शेर थी
वह नित करती थी मनमानी
भेड़ बकरियां खा खा उसकी
नस्ल हो गयी दीवानी !

शेरों कि ही उस जूठन पर
पलते थे वे गीदड़ भाई
जो कहते थे, 'हमको भी दो
मौक़ा अब हे ! बूढ़ी ताई !'

मगर शेरनी कहती उनसं
गीदड़ तो सेवा कर सकते
किंतु स्वयं के सेवक बनकर

हुआ-हुआ क्यों रहते बकते ?
बंद करें वे बकना झकना
फिर वे भी अपने होंगे
भेड़ बकरियां खा पाने के
उनके पूरे सपने होंगे !

जंगल में भी धीरे-धीरे
आग जली फिर आयी हलचल,
हिरना हिरनी भेड़ बकरियां
लगीं खोजने कोई संबल !
कुछ ने मरते वक्त शेरनी
के नाखून चबा डाले थे
अपनी रक्षा ख़ातिर उसने
बाघ करोड़ों तब पाले थे
उसको अपने नाखूनों की
चिंता निशि दिन बहुत सताती
डरी हुई जंगल की रानी
मगर प्रजा को रहती खाती !
'नाखूनों की रक्षा का भी
कोई उपाय है करवाना
जंगल में नाखून-सुरक्षा
का अधिनियम मुझे लगवाना !
चाहे जिसको खाओ चीरो
चूँ तक कोई नहीं करेगा
नाखूनों को छूने वाला
अपनी कुत्ता मौत मरेगा।'

शेरों की नाखून सुरक्षा
का अधिनियम लगा है वन में
भेड़ बकरियां हिरनी हिरना
सारे परेशान हैं मन में !

लेकिन जंगल में इस पर भी
बढ़ी हुई है काफ़ी हलचल
समझ रही हैं भेड़ बकरियां
जंगल में है किसका मंगल !

अगर एक जुट हुए किसी दिन
जंगल के ये भोले प्राणी,
तब जंगल जंगल न रहेगा
आयेगा नव युग इंसानी
नक़ली धूप हटेगी जग से
हम सब का सूरज आयेगा
नाखूनों के बल बूते पर
गुरार्ने वाला जायेगा !

मई दिवस का गीत

मई दिवस
उन मज़दूरों के / बलिदानों का नाम है
जिनसे बदला जग का नक़्शा
उनको लाल सलाम है

शोषण पर आधारित
अपना / जो यह वर्ग समाज है
जिसमें रोज़ी रोटी पाने / को इंसान मोहताज है
बड़े इज़ारेदारों सामंतों की सत्ता देश में
खून भेड़िये चूस रहे हैं
नित बकरी के भेष में

इस दुनिया को बदलो, साथी!
यह उनका पैग़ाम है
जिनसे बदला जग का नक़्शा
उनको लाल सलाम है !

लक्ष्मी के वाहन को जग में
भाती अंधी रात है
पूरब में सूरज निकला जो
करता उस पर घात है
ज्ञान और विज्ञान पराये / श्रम की भारी लूट है
धन्नासेठी राजनीति का
हर आश्वासन झूठ है

मजदूरों की जागृति से / शोषण की नींद हराम है
जिनसे बदला जग का नक़्शा
उनको लाल सलाम है !

दुनिया भर के मज़दूरों ने
थामी लाल मशाल है
भूमंडल के हर हिस्से में / जगी क्रांति की ज्वाल है
सामरजियों को दफ़नाया
उसने क़ब्रिस्तान में
शोषण की सत्ता से नफ़रत
जागी हर इंसान में !

मेहनतकश जनता के बलिदानों का यह अंजाम है
जिनसे बदला जग का नक़्शा
उनको लाल सलाम है

जो जनता की रोज़ी रोटी
मुक्ति नहीं दे पायेगा
दमन, जेल, लाठी गोली का
राज दफ़न हो जायेगा
आओ साथी ! मिल जुल कर अब
बदलें शोषण राज हम
इस तानाशाही का खूनी / पंजा कुचलें आज हम !

जो दीवाने इंकलाब के
पिया मुक्ति का जाम है
जिनसे बदला जग का नक्शा
उनकी लाल सलाम है !